E-CONTENT

जार्ज विल्लहेम फ्रेड्रिक हेगेल का इतिहास का सिध्दान्त

प्रो.(डॉ.)सुरेन्द्र कुमार
विभागाध्यक्ष-इतिहास विभाग,
पटना विश्वविद्यालय, पटना-800005
Mobile No. 9835463960
E-mail ID: kumarsurendra850@gmail.com

इतिहास का सिद्धान्त

हीगल ने इतिहास की दार्शनिक व्याख्या करते हुए उसे बिखरी हुई असम्बद्ध घटनाओं का विकास न मानकर उसे सप्राण विकास माना है। उसका मानना है कि इतिहास की सभी महत्त्वपूर्ण घटनाएँ या कारण निर्वैयक्तिक होते हैं और सामान्य शक्तियों के रूप में होते हैं। ये सामान्य शक्तियाँ विश्वात्मा के उद्देश्यों के अनुकूल ही कार्य करती हैं। उसके अनुसार विश्व इतिहास के विकास की सम्पूर्ण गति पूर्व निश्चित है। उसका मानना है कि विश्वात्मा (पूर्ण विचार, धीमी विकासशील प्रक्रिया से आगे बढ़ती है। विश्वात्मा की विकासशील प्रक्रिया में संयोग या आकस्मिक घटनाओं का कोई स्थान नहीं होता। सम्पूर्ण ऐतिहासिक विकास एक युक्तिपूर्ण योजना के अनुसार ही होता है। जब विश्वात्मा अपने पूर्व निश्चित ध्येय को प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ती है तो उसे अनेक अन्तर्विरोधों का सामना करना पड़ता है। इसलिए विश्वात्मा (पूर्ण विचार) को अनेक रूप धारण करने पड़ते हैं। वह अपने मूल रूप को त्यागकर प्रतिदिन नए रूप ग्रहण करती रहती है। उसका प्रत्येक रूप ऐतिहासिक विकास की एक यात्रा के समान होता है। उसे अपने अन्तिम रूप तक पहुँचने के लिए अनेक यात्राएँ करनी पड़ती हैं।

विश्वात्मा के विकास की प्रथम अवस्था भौतिक अथवा निर्जीव संसार है। हम इसे अपने ज्ञानेन्द्रिय ज्ञान से ही जान सकते है।। इसके बाद सजीव संसार का स्थान है। यह अवस्था अधिक जटिल होती है। तीसरी अवस्था पृथ्वी पर मनुष्य का विकास है। यह प्रथम व द्वितीय अवस्थाओं से अधिक जटिल है क्योंकि इसमें युक्ति तत्त्व का समावेश हो जाता है। अगली अवस्था में परिवार का विकास होता है। इसके बाद नागरिक समाज की अवस्था है। विकास की अन्तिम अवस्था राज्य के विकास की है। इस मंजिल पर पहुँचकर ही विश्वात्मा या पूर्ण विचार का आत्म-साक्षात्मकार होता है। इस तरह पूर्ण ऐतिहासिक विकास का आरम्भ और अन्त राज्य में ही होता है। आत्म-साक्षात्कार की इस अवस्था में ही विश्वात्मा अपने चरम लक्ष्य तक पहुँच जाती है।

हीगल ने अपनी पुस्तक 'Philosophy of History' में विश्वात्मा के विकास की स्थितियों पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि प्रथम स्थिति पूर्वी देशों – चीन, भारत, ईरान, मिò आदि देशों की है। इन देशों में विश्वात्मा शैशवरूप में थी। उसका कहना है कि चीन में समूचा मानव जीवन एक ही व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित होता था और वहाँ स्वतन्त्रता का अभाव था। इसके बाद विश्वात्मा भारत की ओर उन्मुख होकर आगे बढ़ी। इसके बाद विश्वात्मा ने यूनान और रोम में प्रवेश किया। यूनान की कला, धर्म, दर्शन तथा रोम के कानून में इसकी अभिव्यक्ति हुई। इस अवस्था में जनता ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए राजाओं से संघर्ष किया परन्तु उन्हें पूर्ण सफलता नहीं मिल सकी। हीगल का विश्वास है कि विश्वात्मा के रूप में मानव जाति का पूर्ण विकास जर्मनी में होगा। यह विश्वात्मा के विकास की चरम अवस्था होगी। जर्मनी का राष्ट्र-राज्य के रूप में विकास सार्वदेशिक विश्वात्मा का प्रतिनिधित्व करेगा।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि हीगल का इतिहास का सिद्धान्त उसके विश्वात्मा के दार्शनिक सिद्धान्त पर आधारित है। उसका इतिहास का सिद्धान्त विश्वात्मा के कार्यकलापों के आलेख के सिवाय कुछ नहीं है जो संसार के भिन्न-भिन्न राष्ट्रों या जातियों से होकर राष्ट्र-राज्य के रूप में प्रकट होती है। उसका राष्ट्र-राज्य ही कला, कानून, नैतिकता तथा धर्म का सच्चा स्रष्टा है। मानव सभ्यता का इतिहास राष्ट्रीय संस्कृतियों का एक अनुक्रम है जिसमें प्रत्येक राष्ट्र सम्पूर्ण मानव उपलब्धियों के लिए अपना विशेष योगदान देता है।

स्वतन्त्रता का सिद्धान्त

हीगल का स्वतन्त्रता सम्बन्धी सिद्धान्त राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में उसका एक महत्त्वपूर्ण योगदान है। हीगल से पहले भी अनेक विचारकों ने स्वतन्त्रता पर अपने विचार प्रकट किए। लेकिन उन सभी का दृष्टिकोण आत्मपरक (व्यक्तिवादी) ही रहा। हीगल ने इसे व्यापक आधार प्रदान किया है। हीगल के अनुसार- "स्वतन्त्रता व्यक्ति का एक विशेष गुण है। इसको छोड़नेका अर्थ है मानवता का परित्याग करना। अत: स्वतन्त्र न होना मनुष्य द्वारा अपने मानवीय अधिकारों और कर्त्तव्यों का परित्याग करना है।" उसने फ्रेंच क्रान्ति द्वारा प्रतिपादित किए गए स्वतन्त्रता सम्बन्धी मिथ्या व भ्रान्त धारणाओं का खण्डन किया है। स्वतन्त्रता के व्यक्तिवादी विचारकों के अनुसार स्वतन्त्रता घूमने-फिरने, विचार प्रकट करने तथा अपने धर्म का पालन करने, इच्छानुसार जीवन व्यतीत करते में है। लेकिन हीगल ने स्वतन्त्रता अपनी इच्छानुसार कार्य में न होकर राज्य की इच्छानुसार पालन करने में बताई है। हीगल का विचार है कि निरंकुश होकर व्यक्ति की स्वतन्त्रता को तो कुचल सकता है लेकिन व्यक्ति राज्य की इच्छा को कुचल नहीं सकता। इसलिए सच्ची स्वतन्त्रता राज्य के आदेशों का आँख बन्द करके पालन करने में है।

स्वतन्त्रता का विकास

हीगल का मानना है कि विश्वात्मा के क्रमिक विकास की तरह स्वतन्त्रता का भी विकास हुआ है। विश्वात्मा के प्राच्य युग में केवल निरंकुश व्यक्ति ही स्वतन्त्र था। यूनान और रोम में कुछ ही व्यक्ति स्वतन्त्र थे क्योंकि वहाँ दास-प्रथा थी। हीगल के अनुसार नवोदित राष्ट्र जर्मनी में मानव-स्वतन्त्रता का उदय हुआ है जहाँ सभी व्यक्ति व्यक्ति होने के नाते स्वतन्त्र हैं। लेकिन जर्मनी में भी पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं है, क्योंकि वहाँ विश्वात्मा का पूर्ण विकास नहीं हुआ है। जब जर्मन राष्ट्र राज्य के रूप में विश्व मानचित्र पर उभरेगा तो वह पूर्ण स्वतन्त्रता की स्थिति होगी। मानव का अन्तिम लक्ष्य सुख की प्राप्ति न होकर स्वतन्त्रता की प्राप्ति करना है। हीगल का कहना है कि- "विश्व का इतिहास स्वतन्त्रता की चेतना की प्रगति के सिवाय और कुछ नहीं है।" आज तक विश्व में जितने भी युद्ध हुए हैं, उनके पीछे स्वतन्त्रता का विचार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में अवश्य छिपा हुआ है।

दार्शनिक आधार

हीगल ने अपने स्वतन्त्रता सम्बन्धी विचारों को दार्शनिक आधार पर औचित्यपूर्ण माना है। उसके अनुसार स्वतन्त्रता आत्मा का सार है। उसका मानना है कि स्वतन्त्रता का अर्थ अपने आप में पूर्ण होना, दूसरे पर किसी प्रकार से निर्भर न रहना है। यह विशेषता आत्मा में है, जड़ पदार्थों में नहीं। जड़ पदार्थों में आत्मनिष्ठा का गुण नहीं पाया जाता है। संसार की सभी जड़ वस्तुएँ गुरुत्वाकर्षण के नियम के अनुसार शासित होती हैं। उनकी प्रवृत्ति सदा अपने स्वरूप से बाहर अवस्थित गुरुत्वाकर्षण केन्द्र की ओर जाने की होती है। अत: वे स्वतन्त्र नहीं हो सकती। दूसरी तरफ आत्मा अपने स्वरूप से बाहर नहीं जाती। इसलिए आत्मा का विकास स्वतन्त्रता का विकास है और मानव जाति के विकास का इतिहास स्वतन्त्रता के विकास का सूचक है। मानव इतिहास का उच्चतम विकास राज्य के रूप में होता है। इसमें विश्वात्मा अपना अन्तिम साकार रूप ग्रहण करती है। अत: ऐसा राज्य ही पूर्ण स्वतन्त्र राज्य है। विश्वात्मा

के चरम रूप के कारण राज्य व्यक्तियों की स्वार्थमयी व संकीर्ण भावनाओं से ऊपर उठा हुआ होता है। हीगल का कहना है कि स्वतन्त्रता का अभिप्राय वैयक्तिक इच्छा के अनुसार कार्य करना न होकर राज्य की इच्छा के अनुसार कार्य करना है। इससे व्यक्ति अपनी वासनाओं और इच्छाओं की दासता से मुक्ति पाता है और सच्ची स्वतन्त्रता का उपभोग करता है।

कानून और स्वतन्त्रता में विरोध नहीं है

हीगल का मानना है कि कानून स्वतन्त्रता का ही मूर्त रूप है। राज्य का कोई भी कानून व्यक्ति अपनी ही इच्छा का परिणाम है क्योंकि व्यक्ति भी विश्वात्मा का साकार रूप है, यद्यपि उसमें उतनी पूर्णता नहीं है, जितनी राज्य में पाई जाती है। फिर भी वह राज्य का अभिन्न अंग है। लेकिन वह स्वार्थमयी प्रवृत्ति के कारण सामाजिक हित के विपरीत कार्य कर सकता है। उस समय उसका कार्य विश्वात्मा के प्रतिकूल होता है, इसलिए उस पर कानून का अंकुश लगाना आवश्यक होता है। कानून उसकी भलाई ही करता है। वह उसे सच्ची स्वतन्त्रता की ओर उन्मुख करता है। यदि वह कानून का पालन दण्ड के भय से करता है तो उसे स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता। यदि वह अपनी इच्छा से कानून का पालन करता है तो वह विश्वात्मा की इच्छा के अनुसार कार्य करके सच्ची स्वतन्त्रता को प्राप्त कर रहा होता है। अत: कानून और स्वतन्त्रता में विरोध नहीं हो सकता। उसके अनुसार तो कानून का पालन करना ही स्वतन्त्रता है।

हीगल और काण्ट की स्वतन्त्रता सम्बन्धी धारणाओं में अन्तर

काण्ट के अनुसार स्वतन्त्रता 'बन्धनों का अभाव' है। काण्ट स्वतन्त्रता का नकारात्मक तथा आत्मपरक दृष्टिकोण प्रस् करता है। उसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को सदैव अपने व्यक्तित्व की रक्षा करनी चाहिए और राज्य पर अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए। उसके अनुसार स्वतन्त्रता अन्त:करण के अनुसार आचरण करने में है। हीगल के अनुसार स्वतन्त्रता एक सामाजिक व्यापार है। व्यक्ति की स्वतन्त्रता इस व्यापार को बढ़ावा देने में है, व्यक्तिगत स्वार्थों को पूरा करने में नहीं। उसने काण्ट की स्वतन्त्रता सम्बन्धी को नकारात्मक तथा आत्मपरक कहा है। इसलिए उसने काण्ट की स्वतन्त्रता की आलोचना करते हुए कहा है कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता समाज के कानूनों और परम्पराओं को मानने तथा उसके नैतिक जीवन में भाग लेने में है, अन्त:करण के अनुसार आचरण करने में नहीं। उसके अनुसार स्वतन्त्रता इच्छा और कामनाओं की स्वच्छन्द प्राप्ति का नाम नहीं है, यह तो सामाजिक हित में स्व-निर्णय की शक्ति है।

इस प्रकार हीगल ने स्वतन्त्रता को नकारात्मक न मानकर सकारात्मक माना है। उसके अनुसार स्वतन्त्रता बन्धनों का अभाव नहीं है। यह तो राज्य के आदेशों का पालन करने में है। उसने स्वतन्त्रता को आत्मगत (Subjective) न मानकर वस्तुगत (Objective) माना है। हीगल का कहना है कि व्यक्ति को स्वतन्त्रता का अर्थ सामाजिक व्यापार के रूप में समझना चाहिए। उसे अपने सुख के साथ-साथ दूसरों के सुखों पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। यदि उसका कोई कार्य सामाजिक हित के विपरीत हो तो उसे स्वतन्त्रता नहीं कहा जा सकता। उसने काण्ट के व्यक्तिवादी विचार के स्थान पर सामाजिक व्यापार शब्द का प्रयोग किया है। उसने काण्ट के सीमित स्वतन्त्रता के विचार की आलोचना की है। उसका विचार काण्ट की तुलना में कम व्यक्तिवादी है। उसके अनुसार व्यक्ति की निजी स्वतन्त्रता का कोई महत्त्व नहीं है। उसने व्यक्ति की इच्छा को राज्य की इच्छा में विलीन कर दिया है। उसके अनुसार व्यक्ति अपने जीवन का पूर्ण विकास राज्य की इच्छा में ही अपनी इच्छा को विलीन करके ही कर सकता है। इस तरह हीगल ने काण्ट की नकारात्मक, सीमित तथा आत्मगत स्वतन्त्रता के स्थान पर सकारात्मक, असीमित और वस्तुनिष्ठ स्वतन्त्रता का समर्थन किया है।

हीगल की स्वतन्त्रता सम्बन्धी धारणा की विशेषताएँ

1. हीगल के अनुसार सच्ची स्वतन्त्रता अन्त:करण के अनुसार कार्य करने में न होकर विशुद्ध विवेक द्वारा प्रेरित होकर कार्यकरने में निहित है।
2. स्वतन्त्रता स्वार्थ में नहीं, परमार्थ में निहित है। व्यक्ति को समाज हित की दृष्टि से स्वतन्त्रता का उपभोग करना चाहिए।
3. हीगल की स्वतन्त्रता सम्बन्धी धारणा में अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्यों पर अधिक जोर दिया गया है। हीगल का कहना है कि- "व्यक्ति की मुक्ति कर्त्तव्यपालन में है।"
4. स्वतन्त्रता एक सामाजिक व्यापार है क्योंकि समाज से अलग व्यक्ति स्वतन्त्रता की कल्पना नहीं कर सकता। उसके अनुसार स्वतन्त्रता सामाजिक प्रथा, परम्परा और नैतिकता के अनुरूप ढालने में है, अपनी व्यक्तिगत इच्छा को स्वतन्त्र आधार प्रदान करने में नहीं। हीगल का कहना है कि "स्वतन्त्रता के किसी दावे का नैतिक समर्थन उस समय तक नहीं किया जा सकता, जब तक वह सामाजिक हित और सामान्य इच्छा द्वारा समर्थित न हो।"
5. हीगल के अनुसार स्वतन्त्र राज्य की अधीनता को स्वेच्छा से स्वीकार करने में है क्योंकि राज्य विश्वात्मा का साकार रूप है। राज्य विश्वात्मा के चरम विकास की अवस्था है। जो नागरिक राज्य की आज्ञा का पालन करता है, वही पूर्ण स्वतन्त्रता का उपभोग करता है। राज्य विवेक का वास्तविक रूप होता है। अत: उसके अनुसार आचरण करने में स्वतन्त्रता निहित है क्योंकि विवेक सदैव दोषमुक्त होता है।
6. सच्ची स्वतन्त्रता राज्य के कानूनों का पालन करने में है, उनके विरोध में नहीं, कानून व्यक्ति की इच्छा का ही परिणाम होते हैं। हीगल ने कहा है- "जब व्यक्ति की आत्मनिष्ठ इच्छा कानूनों के समक्ष आत्मसमर्पण करती है तो स्वतन्त्रता और आवश्यकता का अन्तर्विरोध मिट जाता है।"

हीगल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी उपर्युक्त विचारों के आधार पर कहा जा सकता है कि हीगल ने स्वतन्त्रता को नकारात्मक व आत्मगत तत्त्वों की परिधि से निकालकर सकारात्मक तथा वस्तुनिष्ठ आधार पर प्रतिष्ठित किया है।

आलोचनाएँ

एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त होने के बावजूद भी हीगल के स्वतन्त्रता सम्बन्धी सिद्धान्त को आलोचना का पात्र बनना पड़ा है। उसकी आलोचना के प्रमुख आधारहैं :-

1. हीगल ने राज्य को असीमित और अमर्यादित शक्तियाँ प्रदान करके व्यक्ति का महत्त्व क्षीण कर दिया है। उसने व्यक्ति को राज्य का दास बना दिया है। उसने व्यक्ति की इच्छा को राज्य की इच्छा के साथ मिला दिया है।
2. हीगल ने अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्यों पर अधिक जोर दिया है। राज्य की वेदी पर व्यक्ति के अधिकारों का बलिदान करने का मतलब व्यक्ति के व्यक्तित्व को कुचलना है। उसने व्यक्ति को राज्य रूपी दैत्य के मुँह में धकेल दिया है। आधुनिक राष्ट्र राज्यों में कर्त्तव्यों के साथ-साथ अधिकारों को भी बराबर का महत्त्व दिया जाता है क्योंकि अधिकार और कर्त्तव्य एक सिक्के के दो पहलू होते हैं।
3. हीगल की स्वतन्त्रता की धारणा प्रजातन्त्रीय विचारों के विपरीत है। उसने राज्य की अधीनता को ही स्वतन्त्रता का नाम दिया है जबकि आधुनिक प्रजातन्त्रीय राज्यों की दृष्टि में व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास स्वतन्त्र सामाजिक वातावरण में ही सम्भव है। हीगल व्यक्ति के ऊपर इतने बन्धन लगा देता है कि उससे प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों का उल्लंघन होने लगता है।कानून और

स्वतन्त्रता एक साथ नहीं चल सकते। कानून व्यक्ति पर कुछ बन्धन लगाता है जबकि स्वतन्त्रता बन्धनों से मुक्ति का ही नाम है। अत: दोनों एक-दूसरे से अलग हैं।

4. हीगल ने यह भी नहीं बताया कि व्यक्ति की समस्त इच्छाओं का केन्द्र राज्य कैसे बन सकता है। उसका यह विचार बड़ा अस्पष्ट व भ्रमपूर्ण है।
5. हीगल ने नागरिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता की उपेक्षा की है। उसने अपने दर्शन में कहीं भी इसका जिक्र नहीं किया है। इस दृष्टि से उसकी स्वतन्त्रता की धारणा अधूरी है। सेबाइन ने कहा है कि- "हीगल के स्वतन्त्रता-सिद्धान्त में कहीं भी किसी प्रकार की नागरिक अथवा राजनीतिक स्वतन्त्रता का भाव नहीं है।"
6. हीगल ने व्यक्ति को साधन तथा राज्य को साध्य मानने की भारी भूल की है। हीगल ने व्यक्ति को साधन तथा राज्य को साध्य मानने की भारी भूल की है। हीगल की इस धारणा के अनुसार व्यक्ति का कोई महत्त्व नहीं है। जबकि इस चेतन व अचेतन जगत् में मानव-बुद्धि की कोई बराबरी नहीं कर सकता।
7. हीगल की इस धारणा में फासीवाद व नाजीवाद के बीज मिलते हैं। हीगल ने फासीवादी व नाजीवादियों की तरह जातीय श्रेष्ठता व कर्त्तव्यों पर बल दिया है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि हीगल ने स्वतन्त्रता को सामाजिक तथ्य मानकर उसमें सार्वजनिक कल्याण की भावना पर आधारित किया है। उसने काण्ट की नकारात्मक व आत्मपरक धारणा के स्थान पर सकारात्मक तथा वस्तुनिष्ठता का गुण पैदा किया है। इससे स्वतन्त्रता की धारणा को नई दिशा मिली है। यह सिद्धान्त व्यक्तिगत इच्छा के स्थान पर सामाजिक हित को प्राथमिकता देता है। इससे समाज में परमार्थ की भावना का उदय होता है, अन्त में कहा जा सकता है कि अपने अनेक दोषों के बावजूद भी यह भी हीगल की सम्पूर्ण राजनीतिक चिन्तन को एक महत्त्वपूर्ण एवं अमूल्य देन है। स्वतन्त्रता-सिद्धान्त को नई दिशा देने में हीगल द्वारा किए गए प्रयास शाश्वत महत्त्व के हैं।

हीगल का योगदान

हीगल का राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसे विश्व का महानतम दार्शनिक माना जाता है। सेबाइन ने हीगल के द्वन्द्ववाद तथा राष्ट्रीय-राज्य की अवधारणा को बहुत महत्त्व दिया है। उसने राजनीतिक चिन्तन को नई दिशा देने का प्रयास करके अपने आप को राजनीतिक दार्शनिकों की पंक्ति में आगे खड़ा किया है। उसकी समस्त रचनाएँ उसकी विलक्षण प्रतिभा का प्रतिबिम्ब हैं। उसके दर्शन ने परवर्ती विचारकों पर जो प्रभाव डाला है उससे उसके बहुमूल्य योगदान का पता चलता है। उसके इतिहास के दर्शन ने राजनीतिक सिद्धान्त के विकास पर बहुत अधिक प्रभाव डाला है। उसके महत्त्वपूर्ण राजनीतिक विचारों के कारण ही उसे राजनीतिक चिन्तन के इतिहास में एक महानतम दार्शनिक माना जाता है। उसकी महत्त्वपूर्ण देन है :-

द्वन्द्ववादी पद्धति

हीगल की द्वन्द्ववादी पद्धति ने समस्त यूरोपियन दर्शन के क्षेत्र में एक क्रान्ति पैदा कर दी। उसने विज्ञान और धर्म के विरोध को समाप्त करके विकासवाद पर जोर दिया। उसने इस बात पर जोर दिया कि इस सृष्टि का निर्माण आकस्मिक घटना न होकर विश्वात्मा की विकासमान प्रकृति का परिणाम है। उसने बताया कि विश्व निरन्तर प्रगति की ओर गतिवान है। इस प्रकार उसने द्वन्द्वात्मक पद्धति के रूप में विश्व में होने वाले महान् परिवर्तनों को समझने के लिए एक नवीन दार्शनिक साधन प्रस् किया। आगे

चलकर कार्ल माक्र्स ने द्वन्द्ववादी तर्क को ही अपने दर्शन का आधार बनाया। इस प्रकार हीगल की द्वन्द्ववादी पद्धति उसकी राजनीतिक चिन्तन को महत्त्वपूर्ण देन है।

राष्ट्रीय राज्य की अवधारणा का जनक

अनेक विचारकों ने हीगल को राष्ट्रीय-राज्य की अवधारणा का जनक, राष्ट्रीयता का अग्रदूत, व्याख्याता और प्रबल प्रचारक कहा है। उसने अपनी रचनाएँ उस समय लिखीं जब जर्मनी विभिन्न टुकड़ों में बँटकर राष्ट्रवाद से विहीन होता जा रहा था। उसने पराजित जर्मनी को उसके गौरवमयी इतिहास की याद दिलाकर उसमें नई चेतना पैदा की। उसके राष्ट्रवादी विचारों से जर्मनी के साथ-साथ अन्य देशों में राष्ट्रवाद की भावना प्रबल हुई। उसने राष्ट्रवाद को धर्म की तरह एक विश्वास का रूप देने का प्रयास किया। उसकी भावना से प्रभावित होकर ही समार्क ने जर्मनी में राष्ट्रीय एकता की स्थापना की। मैक्सी ने कहा है कि- "वर्तमान युग में पाए जाने वाले राष्ट्रीयता के अतीव उत्कृष्ट विचारों का पोषण हीगल से हुआ है। उस समय उसका प्रयोजन जर्मनी के राष्ट्रीय एकीकरण के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करना था, किन्तु उसके विचारों ने ऐसे सिद्धान्तों के रूप में अपना स्थान बनाया जिनसे न केवल जर्मनी में, बल्कि अन्य सभी देशों में भी राष्ट्रीयता को धर्म का रूप दिया गया।" अत: यह निर्विवाद सत्य है कि हीगल आधुनिक राष्ट्र-राज्यों के जनक हैं।

प्रगति का विचार

हीगल ने प्रगति का विचार देकर मानव सभ्यता के इतिहास के विकास को नई दिशा प्रदान की। उसका मानना है कि संसार की सभी वस्तुओं का निरन्तर विकास हो रहा है। उसके अनुसार मानव सभ्यता का इतिहास भी निरन्तर होने वाले विकास की प्रक्रिया का परिणाम है। उसने बताया कि राज्य भी इसी विकासात्मक प्रकृति का परिणाम है।

राज्य के सावयवी सिद्धान्त का प्रतिपादक

हीगल ने कहा कि व्यक्ति आरै राज्य में कोई विरोध नही है। यूनानी विचारकों की तरह उसनेभी कहा कि राज्य के बिना व्यक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती। व्यक्ति का विकास राज्य में ही सम्भव है। हीगल के अनुसार विश्वात्मा का साकार रूप है। यह विश्वात्मा का चरम लक्ष्य है। व्यक्ति भी इसका अविभाज्य अंग है। उसे राज्य का सदस्य होने के नाते अपनी स्वतन्त्रता राज्य की आज्ञा का पालन करने में ही स्वीकार करनी चाहिए। इसी में उसकी भलाई है। इस तरह हीगल ने राज्य को एक साध्य और व्यक्ति को एक साधन मानकर अपने आंगिक सिद्धान्त (Organic Theory) के विचार का पोषण किया है।

राजनीति और नैतिकता का समन्वय

हीगल ने कहा है कि राज्य 'ईश्वर का पृथ्वी पर अवतरण' (March of God on earth) है। वह विश्वात्मा का चरम लक्ष्य है। उसने राज्य को विश्वात्मा जिससे नैतिकता घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई का सर्वोच्च रूप माना है। उससे पहले राज्य का नैतिकता के साथ कोई सम्बन्ध नहीं था। इस दृष्टि से उसने आधुनिक चिन्तन का प्रतिपादन किया। आधुनिक युग में प्रमुख समस्या धर्म को राजनीति के साथ मिलाने की है ताकि शासक वर्ग जनता के हितों पर ध्यान दे और अपनी स्वार्थमयी प्रवृत्ति का दमन करे।

फासीवाद व नाजीवाद का प्रेरणा-स्रोत

हीगल की जातीय श्रेष्ठता पर आधारित राष्ट्रवादी तत्त्वों के परिणामस्वरूप मुसोलिनी के फासीवाद को एक महत्त्वपूर्ण आधार मिल गया। उसके द्वारा राज्य को साध्य मानना, अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्यों पर जोर देना फासीवाद के आधारभूत सिद्धान्त बन गए। हीगल ने राज्य को अलग व्यक्तित्व से विभूषित करके फासीवाद का ही पोषण किया। सेबाइन का कहना है कि- "इटली में फासीवाद ने अपने आरम्भिक

चरणों में हीगल के दर्शन से ही आधार ग्रहण किया। तथापि, फासीवाद ने अपने उद्देश्यों की सिद्धि के लिए हीगल के कुछ सिद्धान्तों को अपने अनुरूप ढाल लिया था।" इसी तरह नाजीवाद ने भी हीगल से प्रेरणा ग्रहण की है। अत: फासीवाद तथा नाजीवाद पर हीगल का प्रभाव स्पष्ट है।

सामाजिक समझौता सिद्धान्त का अन्त

हीगल ने कहा कि राज्य एक कृत्रिम सामाजिक समझौते का परिणाम नहीं है। सामाजिक समझौता राज्य का आधार नहीं हो सकता। राज्य का मूलाधार मानवता की सहज व स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ होती हैं। हीगल के विचारों के कारण सामाजिक समझौता सिद्धान्त का प्रभुत्व समाप्त हो गया। इस प्रकार कहा जा सकता है कि हीगल के दर्शन ने परवर्ती चिन्तन को बहुत प्रभावित किया। उसका सर्वाधिक प्रभाव बिस्मार्क पर पड़ा। बिस्मार्क ने हीगल को राष्ट्रीयता की विचारधारा के आधार पर ही जर्मनी को संगठित किया। माक्र्स ने भी हीगल की द्वन्द्ववादी प्रणाली को अपने चिन्तन का आधार बनाया। हीगल ने नैतिकता को राजनीति से जोड़ने का जो प्रयास किया, उससे राजनीतिक सिद्धान्तों को नई दिशा मिली। हीगल ने धर्म और विज्ञान की खाई को भी पाटने का प्रयास किया। उसने राष्ट्रीय हितों को व्यक्ति के हितों से ज़्यादा प्राथमिकता देकर राष्ट्रवाद का प्रसार किया। उसके राष्ट्रवादी विचारों से फासीवाद व नाजीवाद ने भी व्यापक सामग्री प्राप्त की। उसने नग्न व्यक्तिवाद की आलोचना करके उसके दोषों की ओर चिन्तकों का ध्यान आकृष्ट किया। उसके विचारों का प्रभाव जर्मनी के साथ-साथ अन्य देशों पर भी पड़ा। इसलिए उसे सर्वोत्तम दर्शन का सर्वोत्तम प्रतिनिधि कहा जा सकता है।

For further reading:

1. C.L.Wayper — Political Thought
2. George H. Sabine — A History of Political Theory
3. Bertrand Russel — A History of Western Philosophy
4. Lancaster — Masters of Political Thought
5. R. Vaughan — A History of Political Thought
6. Robert L. Heilbroner — The Worldly Philosophers
7. Antonio Gramsci — Selections from Prison Notebooks
8. Louis Althuser — For Marx
9. D. MacLellan — The Thought of Karl Marx
10. Karl R. Popper — The Poverty of Historicism